अटल बिहारी बाजपेयी विश्वविद्यालय, बिलासपुर (छ.ग.)

शासकीय महाविद्यालय बरपाली
जिला – कोरबा

सत्र - 2023-24
असाइनमेंट कार्य

विषय – भारतीय काव्यशास्त्र (प्रथम प्रश्न पत्र)

एम. ए. तृतीय सेमेस्टर

शीर्षक - भरतमुनि के रस सुत्र की व्याख्या
(उत्पत्तिवाद, अनुमितिवाद, भुक्तिवाद, अभिव्यक्तिवाद)

प्रस्तुतकर्ता
नाम- रूचि कंवर
कक्षा- एम. ए. तृतीय सेमेस्टर
शासकीय महाविद्यालय, बरपाली

निर्देशकर्ता
श्री डी.डी. मंहत
विभागाध्यक्ष हिन्दी
शासकीय महा विद्यालय बरपाली

भारतीय काव्य - शास्त्र

क्र.		पेज नं.
1.	आचार्य भरतमुनि जी के रस-सूत्र की व्याख्या	02-04
2.	① भट्टलोल्लट का उत्पत्तिवाद	04-05
3.	② श्रीशंकुक का अनुमितिवाद	06-08
4.	③ भट्टनायक का भुक्तिवाद	09-10
5.	④ अभिनवगुप्त का अभिव्यक्तिवाद	11-13
6.	निष्कर्ष ।	13.

आचार्य भरतमुनि जी के रस-सूत्र की व्याख्या

आचार्य भरतमुनि रस को काव्य की आत्मा मानते हैं। उनके शास्त्र 'नाट्यशास्त्र' को पांचवें वेद की संज्ञा दी जाती है। नाट्यशास्त्र के छठें अध्याय में रस का विस्तार से वर्णन किया गया है। संस्कृत काव्यशास्त्र का सर्वाधिक प्राचीन संप्रदाय 'रस सम्प्रदाय' है। रस का सामान्य अर्थ पदार्थ आदि के रस के लिए लिया जाता है। किन्तु 'काव्यशास्त्र' में इसे 'काव्यानंद' के अर्थ में समझा जाता है। अर्थात् काव्य को पढ़ने, सुनने और देखने से प्राप्त होने वाला आनंद ही रस है। आचार्य भरत ने नाट्यशास्त्र के छठें अध्याय में एक सूत्र रखा है:-

"विभावानुभाव-व्यभिचारि संयोगाद्रस निष्पत्तिः।"

अर्थात् विभाव, अनुभाव, संचारीभाव के संयोग से रस की निष्पत्ति होती है। सबसे महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि इस सूत्र में स्थायीभाव का उल्लेख नहीं है। वह इसलिए नहीं है कि स्थायीभाव रस दशा की पूर्वावस्था है, अतः रस निष्पत्ति के लिए उसका परिपक्व होना

अजय माला

आवश्यक है। विभाव, अनुभाव एवं व्यभिचारी भाव कृति विशेष में कवि कल्पना द्वारा नियोजित रहते हैं किन्तु स्थायीभाव कृति में न होकर पाठक सहृदय के हृदय में सनातन वासना के रूप में वर्तमान रहते हैं। यही रस को जाग्रत करते हैं। इसलिए आचार्य भरत के इस सूत्र में स्थायी-भाव शब्द का उल्लेख नहीं हैं। इस सूत्र में दूसरी महत्वपूर्ण समस्या यह है कि विभाव, अनुभाव एवं व्यभिचारी भाव का स्थायी भाव से क्या संबंध है, इसे स्पष्ट नहीं किया गया है, अतः अनेक विद्वान् अपने ढंग से इसका अर्थ करने के लिए विवश हैं।

संयोग शब्द भी स्पष्ट नहीं है। उसका अपने ढंग से अर्थ लगाया जाता है। कारण कि उसका विशिष्ट अर्थ आचार्य भरत-मुनि द्वारा निर्दिष्ट नहीं है। अंतिम 'शब्द' इस सूत्र में निष्पत्ति है। निष्पत्ति का क्या अर्थ होगा, यह भी स्पष्ट नहीं है क्योंकि इस सूत्र में प्रयुक्त होने वाले रस निष्पत्ति शब्द का स्थान कहाँ है? वह किस में निष्पन्न होता है? इसका भी उल्लेख इस सूत्र में नहीं किया गया है। इन तथ्यों को स्पष्ट करने के लिए परम्परा में आचार्य भट्ट-लोल्लट, श्री शंकुक, भट्टनायक, अभिनवगुप्त आदि के लिए आदि विद्वानों ने जो व्याख्या की है, उसका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है :-

अजय माला

रस सूत्र के प्रमुख व्याख्याकार

-" विभावानुभावव्यभिचारि संयोगाद्रसनिष्पत्तिः । "

आचार्य	सिद्धांत	दार्शनिक मत	संयोग	निष्पत्ति	रस की स्थिति
भट्टलोल्लट (मीमांसा)	उत्पत्तिवाद (आरोपवाद)	मीमांसा	संबंध	उत्पत्ति	मूल पात्र में
श्री शंकुक (न्याय)	अनुमितिवाद	न्याय	अनुमान	अनुमिति	अभिनेता में
भट्टनायक (सांख्य)	भुक्तिवाद (भोगवाद)	सांख्य	विभावन	भुक्ति	दर्शक में
अभिनवगुप्त (शैव)	अभिव्यक्तिवाद	शैव	अभिव्यंजना	अभिव्यक्ति	सहृदय में

आचार्य भरतमुनि द्वारा दिये गये रस-सूत्र की व्याख्या विभिन्न विद्वानों ने अपने-अपने अनुसार किये है। जिसमें आचार्य भट्ट-लोलट, आचार्य श्री शंकुक, आचार्य भट्टनायक, आचार्य अभिनवगुप्त प्रमुख है। आचार्य भट्टलोलट ने निष्पत्ति का अर्थ उत्पत्ति मानकर अपनी व्याख्या को उत्पत्तिवाद की संज्ञा दिए है। ठिक उसी प्रकार श्री शंकुक ने 'संयोग' का अर्थ 'अनुमान' और 'अनुमिति' को अर्थ उत्पत्ति का अर्थ मानकर अपनी व्याख्या को उन्होंने अनुमितिवाद की संज्ञा दी हैं। आदि विद्वानों ने भी अपने-अपने अनुसार संयोग और निष्पत्ति का अर्थ व्यक्त किये है वह निम्न प्रकार है :-

(1) भट्टलोल्लट का उत्पत्तिवाद :-

आचार्य भट्टलोल्लट के सिद्धांत को मुख्यतः 'उत्पत्तिवाद' कहा जाता है। विभावनुभाव संचारि भाव एवं स्थायीभाव के बीच कार्य-कारण संबंध है, इस प्रकार विभावादि कारणों से स्थायीभाव के जाग्रत होने पर रस की उत्पत्ति होती है। इनके अनुसार "निष्पत्ति" का अर्थ उत्पत्ति है। यहाँ संयोग शब्द का अर्थ है :- परिपुष्ट किया जाना।

अजय माला

परिपुष्ट स्थायी भाव से ही रस की उत्पत्ति होती है। इनके अनुसार व्यभिचारि भाव एवं रस में पोष्य-पोषक संबंध है। रस की उत्पत्ति ऐतिहासिक पात्र में होती है। आचार्य भट्ट-लोल्लट के मत को परवर्ती आचार्यों ने स्वीकार नहीं किया क्योंकि उनके अनुसार न रस की उत्पत्ति ही सम्भव है और न वह ऐतिहासिक पात्र में ही है। रस एक अनुभव व्यापार है, जो उत्पन्न न होकर अनुभूत होता है और इसके अनुभव का प्रमाण पाठक है।

आचार्य भट्टलोल्लट सहृदय का उल्लेख नहीं करते किंतु उनका अर्थ यही रहा होगा कि सहृदय अभिनेता पर वास्तविक रामादि का आरोप करके ही रस की प्राप्ति करता है, इसी से उनके सिद्धांत को आरोप-वाद भी कहा गया है।

इनके अनुसार से स्थायीभाव अपरिपक्व होता है, किंतु वह विभाव, अनुभाव और संचारी भाव के संयोग से परिपक्व हो जाता है। परिपक्वता को प्राप्त स्थायी भाव ही 'रस' कहलाता है। स्थायी भाव का विभाव के साथ 'उत्पाद्य - उत्पादक संबंध' अनुभाव के साथ 'गम्य - गमक संबंध' और व्यभिचारी (संचारी) भाव के साथ 'पोष्य-पोषक संबंध' माना है।

अजय माला

(3) श्री शंकुक का अनुमितिवाद :-

आचार्य शंकुक के मत को अनुमितिवाद कहा जाता है। उन्होंने "संयोग" का अर्थ अनुमान लिया है और निष्पत्ति का अर्थ अनुमिति। उनके अनुसार विभावानुभाव व्यभिचारिभाव के संयोग से रस की अनुमिति होती है। अपने इस कथन को स्पष्ट करने के लिए उन्होंने "चित्रतुरंग दृष्टान्त" का आश्रय ग्रहण किया है। जैसे चित्र में बनाया गया "अश्व" न सत्य है अपितु चित्र की प्रतिकृति मात्र है। वह न मिथ्या है अर्थात् अश्व नहीं है, यह भी नहीं कहा जा सकता अर्थात् वह अश्व का ही चित्र है, वह संशयात्मक है, यह भी नहीं कहा जा सकता।

जिस प्रकार चित्र में बना हुआ तुरंग (अश्व) न सत्य है, न मिथ्या है न संशयात्मक है न भ्रमयात्मक प्रतीति का है। उसी प्रकार अभिनयकाल में मंच पर उस पर स्थित राम न सत्य है, न असत्य है, न उभयात्मक है और न संशयात्मक है।

अजय माला

राम न सत्य है, न असत्य है, न उभयात्मक है और न संशयात्मक है। इन परिस्थितियों के बाद आचार्य शंकुक ने "साहचर्य संबंध" की कल्पना की है। दर्शक बार-बार नट रूप में आने के कारण नट को साहचर्य संबंध के कारण राम मानकर रसास्वादन करने लगता है।

आचार्य शंकुक के अनुसार मूल स्थिति नट में है और साहचर्य संबंध के कारण नट को राम समझता हुआ दर्शक भी रसास्वादन कर लेता है। इस प्रकार विभाव, अनुभाव, संचारी भाव के अनुमान रूप साहचर्य संबंध के कारण रस की अनुमिति होती है।

परवर्ती आचार्यों ने इस अनुमिति सिद्धांत को नहीं माना है क्योंकि अनुमिति सिद्धांत के अनुसार रस की मूल निष्पत्ति नट में होती है और फिर साहचर्य संबंध से दर्शक में यह सिद्धांत इसलिए संगत नहीं है क्योंकि रस मूलतः दर्शक में ही निष्पन्न होता है। वह दर्शक का साक्षात आस्वादन है। रस की अनुमिति सम्भव ही नहीं है।

'चित्र-तुरंग-न्याय' से जैसे हम चित्र में चित्रित तुरंग (घोड़े) को वास्तविक रूप में भागता हुआ घोड़ा ही समझ लेते हैं

वैसे ही अनुकार्य (रामादि) के अभिनय करने वाले अनुकर्ता (अभिनेता) को ही अनुकार्य (रामादि) समझ लेते है। इसका महत्व इस बात में है कि इन्होंने सर्वप्रथम स्पष्टत: सहृदयगत वासना का उल्लेख किया। इससे परवर्ती आचार्यों के लिये पृष्ठभूमि तैयार हुई।

आ० भट्टनायक ने यह तर्क देते हुए विरोध किया कि अनुमान द्वारा हम राम-सीतादि को और उनके प्रेम को देख अपने व अपनी प्रेयसी के प्रेम की कल्पना नहीं कर सकते। उसमें हमारी संस्कारनिष्ठा श्रद्धा बाधा उत्पन्न करेगी। वैसे भी मिथ्या (अनुमान से सत्य की अनुभूति संभव नहीं।

आ० भट्टनायक के मतों का खण्डन करते हुए अन्य परवर्ती आचार्यों ने भी संयोग और निष्पत्ति का अर्थ अपने-अपने अनुसार उसकी व्याख्या किये है। और उनके अनुमितिवाद का खण्डन करते हुए भट्टनायक संयोग का अर्थ विभावन और निष्पत्ति का अर्थ भुक्ति मानते हैं अर्थात वे भुक्तिवाद को मानते हैं। तथा अभिनवगुप्त भी संयोग का अर्थ अभिव्यंजना और निष्पत्ति का अर्थ अभिव्यक्ति मानते हैं अर्थात वे अभिव्यक्तिवाद की संज्ञा देते हैं।

③ भट्टनायक का भुक्तिवाद :-

आचार्य भट्टनायक के सिद्धांत को भोगवाद या भुक्तिवाद कहा जाता है। उनके अनुसार सहृदय द्वारा विभावादि के भोग से रस की भुक्ति होती है। रस पाठक द्वारा भोगीकृत होता है और इस प्रकार निष्पत्ति का अर्थ भुक्ति है। भरत के इस सूत्र का मर्म अर्थ भट्टनायक ने इस प्रकार समझाया है। उनके अनुसार रस निष्पत्ति की प्रक्रिया की तीन स्थितियाँ हैं :- ① अभिधा, ② भावकरण, ③ भोजकरण।

अभिधा शब्द शक्ति नहीं है। इसका अर्थ है, कलात्मक सन्दर्भयुक्त काव्य की समझ। अभिनय प्रकरण में अभिनय के कायिक, वाचिक, सात्विक तथा आहार्य आदि की पूरी तरह से समझ। इन वैशिष्ट्यों से युक्त जब पाठक या दर्शक काव्य या नाटक के सम्पर्क में आता है धीरे-धीरे उसकी अपनी वैयक्तिकता समाप्त होती जाती है। सांख्य दर्शन का आधार ग्रहण करते हुए उन्होंने बताया है - अज्ञान आदि प्रपंचों से मुक्त तम एवं राजस के अवरोध से दर्शक या पाठक का हृदय तादात्म्य की स्थिति तक पहुँचता है। इस तादात्म्य को उन्होंने साधारणीकरण का नाम दिया है।

अजय माला

इस द्वितीय साधारणीकरण की दशा में भावकत्व व्यापार अपनी पूर्ण पराकाष्ठा पर स्थित रहता है। यह साधारणीकरण भावना व्यापार है। इस भावना व्यापार का भोगीकृत रूप ही रस है। इस प्रकार, अभिधा भावकत्व एवं भोगकत्व व्यापार द्वारा रस का भोग किया जाता है। निष्पत्ति का अर्थ है, भाव व्यापार का भोग। इस भोग व्यापार के पूर्व साधारणीकरण व्यापार के अंतर्गत कृति में जो देशकालादि विशिष्ट है। उसका सर्वसामान्यीकृत हो जाता है।

वह न विशिष्ट पात्र तक सीमित रहता है, न कवि तक और न एक पाठक या दर्शक तक। वह देश, काल, पात्र विरहित होकर सर्वसाधारण का विषय बनकर सर्वसाधारणीकृत हो जाता है। साधारणीकरण ही भोग (रसास्वादन) का हेतु है। भट्टनायक के अनुसार साधारणीयकरण कारण है, रस का आस्वादन भोग।

अभिनवगुप्त ने इनके तीन व्यापारों से असहमत होते लिखा है कि 'भावकत्व' व्यापार 'ध्वनि' तथा 'भोजकत्व' व्यापार 'रसास्वादन' में अंतर्भूत हो जाते है, अतः इनकी स्वतंत्र व्याख्या की आवश्यकता नहीं और न ही किसी पूर्ववर्ती आचार्य ने इनका उल्लेख किया था।

④ अभिनवगुप्त का अभिव्यक्तिवाद :-

रस सिद्धांत के इस सूत्र को आचार्य अभिनवगुप्त ने दूसरी तरह से समझाया है। उनके अनुसार विभानुभाव संचारि व्यंजना व्यापार है। "संयोग" का अर्थ व्यंजना व्यापार है। निष्पत्ति का अर्थ 'अभिव्यक्ति है। भरत सूत्र का अर्थ है :- विभावानुभावव्यभि-चारिभाव की व्यंग्यजना से रस की अभिव्यक्ति होती है। रस निष्पत्ति के लिए उनके अनुसार दो शर्तें हैं :-

① रस निष्पत्ति सहृदय में होती है, सहृदय के हृदय का अर्थ है - काव्य के निरन्तर अध्ययन अनुशीलन तथा अभ्यास से जिसकी प्रज्ञा दर्पण की भाँति निर्मल है। और काव्य रचना के मर्म को जो सहज ही हृदयंगम कर लेता है, वही रसास्वादन का मूल प्रमाण है।

② रस - निष्पति के लिए दूसरी अनिवार्यता है वीतविघ्नता। इस वीतविघ्नता का अर्थ है - सहृदय के मन का वैयक्तिक राग, द्वेष, हर्ष, विषाद, मात्सर्य आदि भावों से मुक्त रहना। सहृदय का मन यदि किसी भावात्मक द्वंद या क्लेश से दूषित रहेगा तो रस निष्पत्ति सम्भव नहीं है। इस प्रकार सहृदय के मन की

अजय माला

तटस्थता रस निष्पत्ति का दूसरा प्रमाण है।

आचार्य अभिनवगुप्त ने बताया है कि तटस्थ सहृदय ज्यों ही काव्य के सम्पर्क में आता है, उसका मन वाक्यार्थ की प्रतीति करने लगता है। वाक्यादि की प्रतीति के पश्चात् ही वह देश काल पात्रादि विरहित होने लगता है और धीरे-धीरे उसको अपनी और कृति की अपनी विशिष्टता समाप्त होने लगती है। इस प्रकार न तो कृति की विशिष्टता कृति में रह जाती है और न पाठक की विशिष्टता पाठक में। दोनों अंतत्या एकमेव होकर पाठक में स्थित सनातन वासना रूप रति आदि तटस्थास्थायीभाव को जाग्रत करते हैं। रति भाव का जागरण ही साधारणीकरण है और वही रस है। साधारणीकरण की दशा में न तो कृति की विशिष्टता शेष रहती है और न सहृदय पाठक की वैयक्तिकता निर्विशेष का धर्म ही साधारणीकरण या साधारणीकृत करता है। भट्ट नायक ने साधारणीकरण को रसास्वादन का हेतु माना है किन्तु अभिनवगुप्त साधारणीकरण को ही आनंदस्वरूप रसास्वादन दशा मानते हैं।

इस प्रकार आचार्य अभिनवगुप्त निर्विशेष दशा में अपने ही तटस्थ रसादि

स्थायीभाव की अभिव्यक्ति ही रस रह मानते हैं। आचार्य भरत के रस सूत्र के ये चौथे व्याख्याकार हैं। उन्होंने साधारणीकरण को ही रस निष्पत्ति की संज्ञा दी है।

निष्कर्ष :– आचार्य भरतमुनि द्वारा दिये गये सूत्र :–

'विभावानुभावव्यभिचारि संयोगाद्रसनिष्पत्तिः।' है। जिसमें संयोग और निष्पत्ति का अर्थ आचार्य भट्टलोल्लट, आचार्य श्रीशंकुक, आचार्य भट्टनायक, आचार्य अभिनवगुप्त आदि ने अपने-अपने अनुसार माना है। तथा अपने व्याख्या को उन्होंने उत्पत्तिवाद, अनुमितिवाद, भुक्तिवाद, अभिव्यक्तिवाद की संज्ञा दी है उसके अंतर्गत उन्होंने स्पष्ट रूप से संयोग और निष्पत्ति के अर्थ को समझाने का प्रयास किया है।

अटल बिहारी बाजपेयी विश्वविद्यालय, बिलासपुर(छ.ग)

ATAL BIHARI VAJPAYEE VISHWVIDYALAYA BILASPUR(C.G)

शासकीय महाविद्यालय बरपाली

जिला—कोरबा

GOVT. COLLEGE, BARPALI (C.G.)

प्रोजेक्ट कार्य

सत्र—2023—24

एम.ए.— तृतीय सेमेस्टर

विषय—राजनीति विज्ञान

उददेश्य—अंतर्राष्टीय कानून की परिभाषा प्रकृति क्षेत्र स्त्रोत विकास का अध्ययन

निर्देकर्ता

टी.एल.मिर्झा

शा महाविद्यालय बरपाली(छ.ग)

छात्रा का नाम

गोमती कंवर

एम.ए तृतीय सेमेस्टर

शा महाविद्यालय बरपाली(छ.ग)

Roll No.

Date

अंतर्राष्ट्रीय कानून की परिभाषा

अंतर्राष्ट्रीय विधि से आशय उन नियमों से है। जो स्वतंत्र देशों के बीच परस्पर सम्बन्धों के निपटारे के लिये लागू होते है। अन्तर्राष्ट्रीय विधि किसी देश के अपने कानून से इस अर्थ में भिन्न है कि अंतर्राष्ट्रीय विधि दो देशों के सम्बन्धों के लिए लागू होते है। सम्प्रभु राज्यों के उस औपचारिक समूह को अंतर्राष्ट्रीय कानून की संज्ञा दी जाती है जिसका निर्माण कुछ निर्दिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति को ध्यान में रखकर किया जाता है। अंतर्राष्ट्रीय कानून का निर्माण इस भावना के फलस्वरूप होता है कि मानव को एक होना है। ऐसे कानूनों का निर्माण करते समय सदस्य राज्य अपनी सम्प्रभुता को सुरक्षित रखते है और कानून को अपने प्रयोजनों की प्राप्ति के लिए हर प्रकार की सहायता देने के तत्पर रहते है तथा किसी भी ऐसे राज्य को सहायता देने से दूर रहने के लिए अपने को वचनबद्ध करते है,

Roll No.

Date

अंतर्राष्ट्रीय कानून की प्रकृति

अंतर्राष्ट्रीय विधि की प्रकृति (Nature) को समझने के लिए इसकी विभिन्न परिभाषाओं पर विचार करना आवश्यक है। हेन्स केलसन के अनुसार, " अंतर्राष्ट्रीय विधि अथवा राज्यों के ~~पारस्परिक~~ की विधि ऐसे नियमों के समूह का नाम है जो राज्यों के पारस्परिक सम्बन्धों में उनके आचरण को नियंत्रित करते हैं। अंतर्राष्ट्रीय कानून विधि की वह शाखा है जिसमें राज्यों या राष्ट्रों के बीच आपसी संबंधों को विनियमित करने वाले नियम शामिल हैं। अन्य शब्दों में अंतर्राष्ट्रीय कानून नियमों का एक समूह है जो देशों के बीच बाध्यकारी है और इसका उद्देश्य विभिन्न राष्ट्रों की बीच सुरक्षा और शांति सुनिश्चित करना है। ~~अंतर्राष्ट्रीय~~ अंतर्राष्ट्रीय कानून के तहत प्रश्न का विषय केवल राष्ट्र / राज्य ही नहीं है बल्कि एक व्यक्ति भी हो सकता है। अंतर्राष्ट्रीय कानून एक विशाल ढांचा है इंसानी आदान प्रदान का जो कि खुद नैसर्गिक नियमों के ऊपर रचा बुना है। यहां इंसानी आदान

Roll No.

Date

प्रधानतः कहें अंतर्राष्ट्रीय विधि के नियमों में अधिकतर नियम राज्यों की सहमति के आधार पर आधारित हैं, जबकि उनमें से कुछ वास्तव में प्राकृतिक विधि से बने अंतर्राष्ट्रीय कानून की प्रकृति के सम्बन्ध में, विभिन्न राष्ट्रों का दृष्टिकोण भिन्न भिन्न है।

अंतर्राष्ट्रीय कानून का क्षेत्र :-

जो स्वतंत्र देशों के बीच परस्पर सम्बन्धों (विवादों) के निपटारे के लिये लागू होते हैं। अंतर्राष्ट्रीय विधि किसी देश के अपने कानून से इस अर्थ है कि राज्य इस बात को मानते है वह अंतर्राष्ट्रीय विधि के नियमों से विधिक रूप से बाध्य है। विधि के नियम जो मुख्य रूप से अंतर्राष्ट्रीय संधियों तथा रूढ़ियों के परिणामों स्वरूप बने हैं, राज्य के नियमों से क्षमता में तुलनीय नहीं है। कभी-कभी संधियों के उपबंधों का पक्षकार अपनी इच्छा अनुसार निर्वचन करते है।

(1) अंतर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा बनाये रखना :-

अंतर्राष्ट्रीय कानूनों के शांति एवं सुरक्षा बनाये रखना जिसे सभी कानूनों का पालन हो।

(2) राष्ट्रों में पारस्परिक मैत्री बढ़ाना :-

अंतर्राष्ट्रीय कानूनों में राष्ट्रों में पारस्परिक मैत्री बढ़ाना।

(3) सभी प्रकार की आर्थिक समाजिक, सांस्कृति तथा

कानूनी तहत सभी प्रकार की आर्थिक और सामाजिक सांस्कृति तथा न्याय व्यवस्था में विधियों में विरोध या निजी अंतर्राष्ट्रीय कानून वह नियम या कानून होते है जिनका अंतर्राष्ट्रीय कानून की प्रकृति के सम्बन्ध में विभिन्न राष्ट्रों का दृष्टिकोण भिन्न-भिन्न होता है। प्रत्येक राष्ट्र अपने हितों के आधार पर अंतर्राष्ट्रीय विधि के नियमों में अधिकतर नियम राज्यों की सहमति के आधार पर आधारित हैं जबकि उनमें से कुछ वास्तव में प्राकृतिक विधि से बने अंतर्राष्ट्रीय कानून की प्रकृति के सम्बन्ध में विभिन्न राष्ट्रों का दृष्टिकोण भिन्न-भिन्न होता है। प्रत्येक राष्ट्र अपने हितों के आधार पर संहिता बनाने में रुचि लेता है। यह भावना एक ऐसी संहिता के निर्माण में बाधक है जिस पर सबकी

Roll No.

Date

सहमति हो। जो स्वतंत्र देशों के बीच परस्पर सम्बन्धों (विवाहों) के निपटारे के लिये लागू होते हैं। अंतर्राष्ट्रीय विधि किसी देश के अपने कानून से इस अर्थ अन्य देशीय कानून तथा विदेशी तत्व - निजी अंतर्राष्ट्रीय कानून के प्रयोजन के लिये अनदेशीय कानून से तात्पर्य किसी भी ऐसे भौगोलिक क्षेत्र की रन- संगठनों के संचालन के बहु आयामी (मल्टीडायमेंशनल) क्षेत्र हो। ये है प्रमुख अंतर्राष्ट्रीय संगठन विश्व बैंक - विश्व बैंक ऐसे अंतर्राष्ट्रीय कानूनी प्रणाली के तहत कुछ अधिकारों और कर्तव्यों के साथ कानूनी व्यक्तित्व रखने वाली संस्थाओं के रूप में जाना

अंतर्राष्ट्रीय विधि

अंतर्राष्ट्रीय विधि के नियमों का राज्यों द्वारा बार-बार उल्लंघन किया जाता है तथा अधिकारों के दावेदार विधि को अपने हाथों में ले लेते हैं। यद्यपि

Roll No.

Date

सिद्धांत के अनुसार

अंतर्राष्ट्रीय कानून या अंतर्राष्ट्रीय संधियों के नियम राज्य कानून के क्षेत्र में भी लागू किये जा सकते हैं जबकि अंतर्राष्ट्रीय कानून विधि की वह शाखा है जिसमें राज्यों या राष्ट्रों के बीच आपसी संबंधों को विनियमित करने वाले नियम शामिल हैं। अन्य शब्दों में

Roll No.

Date

अंतर्राष्ट्रीय कानून के स्रोत विकास

आधुनिक काल में संधियों को अंतर्राष्ट्रीय विधि का सर्वाधिक प्रमुख स्रोत माना जाता है अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय के स्टेट्यूट के अनुच्छेद 38 (1) 5) के अनुसार अन्तर्राष्ट्रीय अभिसमय (international conventions) चाहे वे साधारण हों या विशिष्ट (Particular) या न्यायालय द्वारा लागू किये जायेंगे।
अंतर्राष्ट्रीय विधि के स्रोतों से तात्पर्य कानून को विकसित करने वाले तत्वों से माना जाता है। समाज के ऐतिहासिक विकास के ही साथ-साथ कुछ मूलभूत तथ्य जो कानूनों द्वारा अस्तित्व में आते हैं, विधि को शक्ति प्रदान करते हैं।

स्टार्क के अनुसार

अंतर्राष्ट्रीय विधि के स्रोत से हमारा तात्पर्य उस वास्तविक सामग्री से है जो अंतर्राष्ट्रीय विधिशास्त्री अंतर्राष्ट्रीय झगड़ों के नियम निर्मित करने के लिए प्रयोग करता है।

Roll No.

Date

एडवर्ड कॉलिन्स के अनुसार

अंतर्राष्ट्रीय विधि के स्रोतों से हमारा तात्पर्य उन तरीकों तथा प्रक्रिया से है जिनके द्वारा अंतर्राष्ट्रीय विधि का जन्म होता है।

प्रसिद्ध विद्वान रॉस के अनुसार

विधि का उद्गम विशुद्ध रूप से उन स्रोतों की ओर इशारा करता है जिनसे बनी हुई व्यवस्थाएं विधिसम्मत स्वीकार की जाती है।"

अंतर्राष्ट्रीय विधि के प्रमुख स्रोत

(1) रूढ़ि

(2) संधियाँ

(3) सभ्य राष्ट्रों द्वारा मान्यता प्राप्त विधि के सामान्य सिद्धांत

(4) न्यायिक विनिश्चय

(5) विधिवेत्ताओं के लेख

(6) साम्या

(7) महासभा के संकल्प

(1) रूढ़ि :— रूढ़ि अंतर्राष्ट्रीय विधि का मौलिक स्त्रोत होने के साथ-साथ इसका प्राचीनतम स्त्रोत भी है तथा किसी समय पूरे स्त्रोतों में सबसे अधिक महत्वपूर्ण था, क्योंकि अंतर्राष्ट्रीय विधि के अधिकतर नियम

(2) संधियाँ :— आधुनिक काल में संधियों को अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय के स्टेट्यूट के अनुच्छेद 38(1) 5) के अनुसार अंतर्राष्ट्रीय अभिसमय चाहे वे साधारण हों या विशिष्ट (Rational Particular) न्यायालय द्वारा लागू किये जायेंगे।

(3) न्यायिक विनिश्चय (Judicial decisions) :
न्यायिक विनिश्चय अंतर्राष्ट्रीय विधि के गौण अथवा सहायक स्त्रोत माने जाते हैं। ऐसा इसलिए है क्योंकि न्यायालय के निर्णय किसी पूर्व निर्णय (Precedent) का सृजन नहीं करते।

(4) विधिवेत्ताओं के लेख :— अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय के अनुच्छेद 38(1)(d) के अनुसार विभिन्न देशों के प्रसिद्ध विधिवेत्ताओं के लेख एवं गोष्ठियाँ

Roll No.

Date

अंतर्राष्ट्रीय कानून का विकास

अंतर्राष्ट्रीय कानून की प्रकृति के सम्बन्ध में विभिन्न राष्ट्रों का दृष्टिकोण भिन्न भिन्न होता है। प्रत्येक राष्ट्र अपने हितों के आधार पर संहिता बनाने में रुचि लेता है। यह भावना एक ऐसी संहिता के निर्माण में बाधक है जिस पर सबकी सहमति हो।
अंतर्राष्ट्रीय कानून का जनक कौन है?
अंतर्राष्ट्रीय कानून के जनक को आमतौर पर ह्यूगो ग्रोटियस एक डच दार्शनिक और न्यायविक माना जाता है जिन्होंने 1625 में डी ज्यूर बेली एसी पेकिस (युद्ध और शांति के कानून पर) पुस्तक लिखी थी। इस पुस्तक में ग्रोटियस ने अंतर्राष्ट्रीय की नींव रखी।

Roll No.

Date

जिसके विरुद्ध उनका संगठन निवारक अथवा बाध्यकारी कार्यवाही कर रहा हो। अंतर्राष्ट्रीय संगठन सम्प्रभु राज्यों के मध्य सामान्यतः एक आधारभूत समझौते द्वारा सामान्य हितों की प्राप्ति के लिए स्थापित होता है। यह कानूनों के एकीकृत समुदाय को परिलक्षित करता है।

अंतर्राष्ट्रीय कानून राज्यों का ऐसा संघ है जिसकी स्थापना संधि के आधार पर होती है और जिसका उद्देश्य अंतर्राष्ट्रीय कानून के अनुसार अपने लक्ष्यों को प्राप्त करना होता है।"